प्रथम - अध्याय

प्र थ म अ ध्या य

भगवतीचरण वर्मा व्यक्तित्व एवं कृतित्व

भगवतीचरण वर्मा : एक व्यक्ति

यह सत्य है कि साहित्यकार के कृतित्वपर उसके व्यक्तिगत जीवनाभूति की गहरी छाप रहती है । वह अपने आपको दूर रखकर साहित्य का सृजन नहीं कर सकता । उसने किन संस्कारों से प्रेरित होकर एवं परिस्थितियों से सामना करते हुए साहित्य सृजन किया है । इस जानकारी के लिए उसके व्यक्तिगत जीवन, स्वभाव, समष्टिगत चेतनाओं जिसमें उसका विकास होता है, यह जानना आवश्यक है ।

जीवन वृत्त :

हिन्दी साहित्यकाश के बहुत प्रतिभासंपन्न कलाकार भगवती बाबू का जन्म 30 अगस्त 1903 ई. में उततर प्रदेश के उन्नाव जिलें के शफीपुर तहसील में बाबू देवीचरण वर्मा के अग्रज पुत्ररत्न के रुप में हुआ । पिताजी व्यवसाय से वकील थे । वे कायस्थ परिवार के थे । वर्माजी के पितामह दो-तीन गाँव के जमींदार थे । उनकी दो पत्नियाँ थी । सन्तानों के बीच जायदाद का बँटवारा होनेपर उनके पास धन नहीं बचा अतः उन्होंने वकालत पास करने के पश्चात उन्नाव जिले के शफीपुर तहसील में नौकरी करना आरंभ किया । बीसवी शताब्दी के प्रारंभ में भारत में हर क्षेत्र में परिवर्तन हुआ था । इसी परिवर्तनशील प्रवृत्ति के कारण पँजीवाद का विकास गाँवोंमें तेजी से हो रहा था । इसी समय कुछ दिनों के बाद बाबू देवीचरण अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाने के हेतु पुनः कानपुर आ बसे ।

भगवतीबाबू खेल-कूद में प्रवीण थे । उनका गला तो सुरीला था ही । अतः वे गाते समय आस-पास के लोग इकट्ठा हो जाते थे । स्वयं उन्होंने लिखा भी है["बचपन में मुझे संगीत का शौक था, मेरा कंठ सुरीला था '... अपने मोहल्ल की रामलीला में मैं रामायण पाठ करता था "।[1] पर उनके ये सुख के दिन अधिक न रहे पाँच वर्ष की अल्पायु में ही वर्माजी के पिता का देहान्त हुआ ।

सन 1908 ई के प्लेग की महामारी में बाबू देवीचरण का देहान्त हो गया और परिवार पर पहाड़ टूट पड़ा । पिता की मृत्यु के पश्चात अपने परिवार के साथ अपने ताऊजी प्रयागदत्त के यहाँ रहने लगे । ताऊजी नें उनकी जमीन जायदाद बेचकर बैंक में रूपये जमा कर दिए । उस पर जो ब्याज था वह केवल 22 रूपये प्रतिमाह, वही एकमात्र साधन उनकी जिविका चलाने के लिए सहायक हुआ । खेलने-कूदने की उम्र में ही उनपर घर चलाने का बोझ आ पड़ा, जिसके कारण वे बचपन के दिनों मे आनंद से वंचित हो गये ।

भगवती बाबू को अध्ययन करते समय बहुतसी कठिनाइयों से जूझना पड़ा । उनपर किसी का दबाव नहीं था । पिताजी बचपन में ही परलोक सिधारे थे, अतः वे एक आझाद पंछी की तरह रहने लगे थे । फिर भी उन्होंने अपने आपको काबू में रखा । इसका कारण है, कुल के संस्कार तथा नैतिक मान्यताएँ आदि का उनपर पड़ा हुआ असर ।

भगवती बाबू की बुध्दि तीव्र और प्रतिभासंपन्न थी । जब स्कूल की पढ़ाई शुरु हुई तब वर्माजी ने अपने प्रतिभाशाली मस्तिष्क का परिचय दिया, वह एक ही साल में चौथी और पाँचवी कक्षा में उत्तीर्ण होकर । मात्र आगे आर्थिक संकट बराबर बने रहने के कारण एकाग्र होकर वे पढ़ न पाये । शिक्षा के साथ-साथ घरेलु कार्य में भी अपना योगदान देना पड़ता था । कापी किताब खरीदने के लिए पैसे न मिल पाते थे, जिसके कारण उनको अध्यापकों की बातें सुननी पड़ती थी । सहपाठी भी उनका उपहास किया करते थे, लेकीन बाबूजी इसे अपना भाग्य सिध्दान्त समझकर सह लेते थे । ऐसी आर्थिक दशा के कारणवश (से) ही बाबूजी सातवी कक्षा में पास हुए लेकिन हिन्दी में फेल हो गये फिर भी उन्होंने हिम्मत न हारी । कई मुसीबतों का सामना करते-करते वे स्कूल में जाया करते थे ।

सातवी में फेल होने से उन्हें शर्मिंदा होने पड़ा था । स्वयं उन्होंने लिखा हैं -"'जब मैं सातवे दर्जे में पढ़ता था, तब हिन्दी में फेल हो जाने के कारण मेरे अध्यापक श्री जगमोहन 'विकसित' ने मुझे शर्मिंदा करते हुए हिन्दी सुधारने के लिए श्री मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत-भारती' आदि कविता, पुस्तकें तथा 'सरस्वती नाम की मासिक - पत्रिका पढ़ते रहने की सलाह दी थी ।' .... फलतः घरमें गा-गाकर 'भारत भारती' पढ़नी आरम्भ की .... 'भारत-भारती' पढ़ते-पढ़ते मेरे उमंगो

का सागर लहराने लगा । मैंने कागज पेन्सिल उठायी 'भारत-भारती' के छंद में देश प्रेम पर सात-आठ पंक्तियाँ लिख ड़ाली । दूसरे दिन मैंने 'विकसित' जी को जो स्वयं अच्छे कवि थे, अपनी वह कविता दिखायी उन्होंने मुझे मात्रा बनने की प्रक्रिया बतलायी, छंदो का ज्ञान कराया । कविता का प्रथम पाठ और साथ ही साथ अंतिम पाठ भी । तो मैं कवि बन गया ।"[2]

इसके पश्चात भगवती बाबू अध्ययन करने में दिलचस्पी लेने लगे । किन्तु पारिवारिक आर्थिक विषमता का बाढ़ समाप्त नहीं हुआ था । 'पारिवारिक विषमता के विष को यह हिन्दी की भोला-भंड़ारी काव्यानंद में निमज्जित होकर पीने लगा । अंतचेतना में बैठे हुए कलाकार की प्रतिभा जाग उठी और वह नये लोक में अपने कृतिकार को लोरियों की लोल लहरोंमें थपकियाँ दे-दे जीवन के अनबु राग सुनाने लगी ।'[3]इसी तरह की पारिवारिक परिस्थिती में ही वर्माजीने थियासॉफिकल स्कूल से आठवी कक्षा उत्तीर्ण कर क्राइट चर्च कॉलेज, कानपुर में प्रवेश लिया । तब तक प्रथम विश्वयुध्द समाप्त हो चुका था । अँग्रजोंने सन १९११ ई. में दमनकारी नीति का प्रयोग किया । फलतः राष्ट्रीय चेतना तूफान की तरह तेज हो उठी, जिससे वर्माजी का भावुक कवि हृदय जागृत हो उठा । उन्होंने राष्ट्रीय भावनासे प्रेरित होकर देशभक्ति, बलिदान एवं त्याग की कविता लिखी, जो 'प्रताप' नामक पत्रिकासे प्रकाशित हुई थी । उनके जीवन के यही महत्वपूर्ण दिन हैं । अपनी कविताओं को 'प्रताप' से छपवाने के सिलसिले में उनका परिचय श्री गणेश शंकर विद्यार्थी से हुआ, जो 'प्रताप' पत्रिका के संपादक थे । उन दोंनो के सम्बन्ध बढ़ते गए । उन दिनों गणेश शंकर विद्यार्थी के प्रोत्साहन से कानपुर में हिन्दी साहित्य की नवीन धारा का आविर्भाव हो रहा था । यही पर वर्माजी का परिचय बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', चंद्रिका प्रसाद आदि से हुआ जो आगे चलकर मित्रत्व में परिवर्तित हुआ । गणेश शंकर विद्यार्थी से ही प्रभावित होकर वर्माजी ने विक्टर हयूगो के उपन्यास पढ़े थे । स्वयं वर्माजी का कथन है कि "मैने विक्टर हयूगो के उपन्यास उस कच्ची उम्र में ही पढ़ ड़ाले थे ।"[4] उन्हीं के प्रभाव से सन १९२१-२२ में वर्मा जी ने कार्ल मार्क्स् एवं फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रमुख व्यक्तियों पर लेख लिखे थें जो उन दिनों 'प्रभा' नामक मासिक पत्र में छपे थे । वर्माजीने गणेश शंकर विद्यार्थी के बारें में स्वयं लिखा हैं -"यदि मैं बाल्यकाल में ही गणेश शंकर विद्यार्थी के सम्पर्क में न आ गया होता तो मैं कोई दूसरा ही व्यक्ति होता । मेरे निर्माण में उनका बहुत बड़ा प्रभाव रहा हैं ।"[5]

सन 1921 ई में क्राईस्ट चर्च कॉलेज से हायस्कूल पास करने के पश्चात वर्माजी ने इंटरमिडियट के प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया । इस समय वे लेखक तथा कवि के रुप में भी प्रसिध्द होने लगे । इसी दौरान सन 1923 ई. में वे फिर एक बार इंटर में फेल हो गये । फेल होने का कारण था कानपुर, हिन्दी साहित्य संमेलन । जिसमें 'कौशिक' जी की प्रेरणा से नवयुवक कवि भगवती बाबू ने काव्य पठन किया । जिससे उनकी ख्याति हिन्दी साहित्य क्षेत्र में गूँज उठी । इन्हीं दिनों वर्माजी का परिचय कतिपय साहित्यकारों एवं कवियों से हुआ । जिनमें प्रेमचंद्र और 'अभ्युदय' पत्र के सम्पादक श्री कृष्णकान्त मालवीय के नाम प्रमुख हैं । इसके बाद वे हिन्दी साहित्य संसार में कवि के रूप में आवतरित हुए । सन 1924 में वर्माजी ने इंटर पास किया और स्नातक उपाधि के हेतु इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया । किन्तु वे कानपुर के महामानव गणेश शंकर विद्यार्थी को कदापि न भूल पाये । उन्होंने उनके बारें में लिखा हैं "मैं गणेश शंकर विद्यार्थी का शिष्य नहीं रहा, मैं उनका अनुयायी न बन सका । लेकिन उन्होंने मेरे जीवन में मेरे अनजाने एक अमिट छाप छोड़ दी, यह मैं स्वीकार करता हूँ । मैं एक अराजक किस्म का आदमी मैंने हमेशा उनका आदर किया । शायद इतना आदर मैंने और किसीका नहीं किया अपने जीवन में ।"[6]

सन 1926 में वर्माजी ने बी.ए. की परीक्षा पास की और एम्.ए. हिन्दी में प्रवेश लिया । एम्.ए. के प्रथम वर्ष में वे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए । वर्माजी नौकरी नहीं करना चाहते थे इसलिए उन्होंने सन 1928 ई. में वकालत की परीक्षा पास कर ली और वे वकील बन गए । मगर फिर भी आर्थिक समस्या के संघर्ष ने उनका पीछा न छोड़ा वह संघर्ष बराबर बनता रहा ।

भगवतीचरण वर्माजी के जीवन संघर्ष की एक अजीबसी दास्तान है । विषम परिस्थितियों में भी नाराज न होकर इस महान कलाकार ने अपना साहित्य सृजन कार्य जारी रखा था । आरम्भ से ही उन्हें भयानक संघर्ष का सामना करना पड़ा । फिर भी उन्होंने साहित्य क्षेत्र को त्याग नहीं दिया उन्होंने खुद एक जगह पर लिखा है "बचपन में कुशाग्र बुध्दि का बालक समझा जाता था । कक्षा में प्रथम या दूसरा स्थान मिलता था मुझे । जब मैं पाँच वर्ष का भी पूरा नही हुआ था, तब मेरे पिता की मृत्यु हो गयी थी । अपने सौतेले ताऊ की देखरेख में बढ़ रहा था । वह एक मारवाड़ी फार्म के कारिंदे थे । मेरे सगे ताऊ डिप्टी इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल जरुर थे, लेकिन रईस तबीयत के मौज-मजे में डूबे हुए । सब के सब मेरे प्रति उदासीन, केवल मेरी विधवा माँ को यही चिंता थी कि

मैं बड़ा आदमी बनूँ । उन दिनों बड़े आदमियों में समझे जाते थे, ऊँचे अफसर, वकील या डॉक्टर ।.. सन 1920 में मेरे सगे ताऊ का देहान्त हो गया और मैं अपने परिवार का सबसे बड़ा पुरुष सदस्य रह गया । मेरी ताई उनके तीन बच्चे उम्र में मुझसे छोटे, मेरी माता, मेरा छोटा भाई और सत्रह साल का मैं ।... मध्यम वर्ग की निष्ठाएँ और मान्यताएँ अपने सिर पर लादे हुए मैं अफसरी या वकालत के लिए पढ़ने लिखने लगा । लेकिन कविता और साहित्य का क्षेत्र मुझसे छूट नहीं सका ।"[7]

सन 1928 ई. में वकालत पास करने के बाद वर्माजी ने कानपुर में अपने पिताजी के ज्युनिअर वकील बाबू मुन्नुलाल के निर्देशन में वकालत शुरू की । लेकिन वकालत जिन बातों पर चलती है, उनपर उसका विश्वास नहीं था । फिर उनमें सृजनात्मक प्रतिभा का जोश भी था इस कारणवश इस पेशे में वे 'असफल' रहे । नौकरी न करने के लिए वकालत एक अच्छा बहाना मात्र था । इसी समय पत्नी की बीमारी बढ़ती जा रही थी । अतः 1930 में वे कानपुर छोड़कर अपने ननिहाल हमीदपुर में वकालत जमाने के लिए आए । वहीं पर उन्होंने अपना प्रसिध्द उपन्यास 'चित्रलेखा' का लेखन कार्य आरम्भ किया । वहाँ से भी वे सन 1931 में भदरी रियासत के राजा के निमंत्रण पर वकालत करने के हेतु प्रतापगढ़ आ गए । उन दोनों ने एक प्रकाशन संस्था की योजना भी बनाई थी, किन्तु उस संस्था की योजना ठप्प हो गई तो स्वाभिमानी बाबूजी ने राजासाहब के आश्रय में रहना पसंद नहीं किया और वहाँ से वे इलाहाबाद वापिस आ गए । सन 1933 में पत्नी उमा का देहान्त हुआ । उसी समय देश में साम्प्रदायिक दंगो की लपटें उठी । इन दंगो के कारण और बेकारी के कारण वर्माजी की मानसिक स्थिती बहुत आहत हो गई थी । सन 1934 ई. में उन्होंने नंदिता से अपना दूसरा विवाह किया । आर्थिक विषमता में अब भी कोई कमी न थी । निराशा और भयानक पीड़ा से मुक्ति पाने के हेतु उन्होंने 'विनोद मिल्स' उज्जैन के मालिक श्री लालचंद सेठी के यहाँ ढाई-सौ रूपये प्रतिमाह पर नौकरी करना शुरू किया । वहाँ उनके लिए कोई विशेष काम नहीं था सिवा इसके कि एखाद पत्र लिखना या पढ़कर सुनाना और सेठी साहब के साथ नाश्ता भोजन करना । वर्माजी एक स्वाभिमानी और सच्चे इन्सान, अतः बिना कोई कामकाज किए मुफ्त में कमाया रूपया उन्हें अच्छा नही लगता था । अतः उन्होंने वहाँ भी त्यागपत्र दे दिया और सीधे वापिस इलाहाबाद चले आए ।

आर्थिक संकटो के साथ जूझने का खेल वर्माजी को बचपन से ही साथ दे रहा था । वह फक्कड़ मौलवी उसके साथ जिद से खेल रहा था । मगर कभी हार नहीं मानता था । सन 1935 ई. में वर्माजी के जीवन में एक महत्वपूर्ण घटना घटी । वह थी हिन्दी साहित्य के सम्मेलन के पदपर उनकी नियुक्ति । इस समय के दौरान में ही 'मधुकण' तथा 'दो बाँके' ये दो कहानी - संग्रह और साथ ही साथ 'प्रेमसंगीत' यह काव्यसंग्रह आदि रचनायें प्रकाशित हुई । परंतु वर्माजी यह जान चुके थे किं "कविता कवि सम्मेलनों के सिवा आजीविका की समस्या हल नहीं कर सकती थी ।.... गद्य लेखनव्दारा ही हल की जा सकती थी । इसलिए वर्माजी ने गद्य लेखन प्रारम्भ किया ।" [8] धीरे-धीरे उनकी प्रसिध्दि बढ़ रही थी । मगर फिर भी वे आर्थिक संघर्षों से मुक्त नहीं हो पाये थे । इन्ही दिनों में जब इलाहाबाद में संघर्षरत दिन बिता रहे थे, तभी कलकत्ता के फिल्म कार्पोरेशन ऑफ इंडिया ने उन्हें कहानी और संवाद लेखन के लिए आमंत्रित किया । वहाँ वे ढाई-सौ रूपये प्रतिमाह कमाते थे । वहाँ वे एक साल तक रहें । वहाँ भी उन्होंने स्वाभिमानी स्वभाव वृत्ति के कारण त्यागपत्र दे दिया और फिर वे वहाँ से प्रयाग में आए । प्रयाग में वे स्वयं की प्रकाशन योजना में जुट गए । नौकरी करना वर्माजी की प्रवृत्ति ही नहीं थी । उन्होंने एक जगह पर लिखा भी है "मैं कह चुका हूँ कि मैं नौकरी करने को बना ही नहीं हूँ, अहंमान्यता की सीमा तक पहुँचानेवाला इतना सरल अहंम् मिला है मुझे ।" [9]

स्वाभिमानी एवं मिलनसार प्रवृत्ति के भगवती बाबू का विभिन्न क्षेत्र के अनगिनत व्यक्तियों से सम्पर्क बने थे । उनकी आर्थिक दशा को देखकर लीड़र प्रेस के भारती भंडार की देखभाल करने वाले एवं एक सफल कहानीकार पं. वाचस्पति पाठक ने कहा "भगवती बाबू आप गंभिरतापूर्वक उपन्यास लेखन का काम उठा ले, आपकी आर्थिक समस्या का निदान उपन्यास लेखन में हैं ।"[10] यह बात बाबूजीने मान ली और वे एक नवीन उपन्यास के रचनाकार्य में जुट भी गए ।

सन 1940 ई. में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, काशी में बाबू को तरूण साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष बनाया गया । उसी वर्ष में उनके प्रसिध्द उपन्यास 'चित्रलेखा' पर प्रसिध्द फिल्म निर्देशक केदार शर्मा ने फिल्म बनाना आरम्भ किया । और इसी वर्ष में उनका 'मानव' नामक काव्यसंग्रह भी प्रकाशित हुआ ।

ई.सन 1942 में बाबू को बॉम्बे टाकिज ने कहानी और संवाद लेखन करने के लिए आमंत्रित किया इस तरह वे बम्बई फिल्म जगत् में आ गए । 'चित्रलेखा' पर फिल्म बनने के कारण वर्माजी की ख्याति, बढ़ चुकी थी । अतः वे यहाँ अपनी मनमानी शर्तपर काम करते रहे । उन्होंने बम्बई फिल्म जगत् को सन 1942 से 1947 तक अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया । लेकिन उनका मन यहाँ भी उबने लगा । सन 1942 के भारत छोड़ो का नारा जब बुलन्द हो उठा था, तब उसमें वर्माजी ने अपना योगदान नहीं दिया था । इसका कारण था उनके भाग्य की विड़िम्बना । उन्होंने इस सम्बन्ध में लिखा है - "मैंने स्वतंत्रता संग्राम में कोई भाग नहीं लिया । राजनैतिक क्षेत्र से मैं हमेशा ही अलग रहा हूँ । फिर पारिवारिक स्थिति भी ऐसी नहीं थी कि मैं जेल जाता .... और बॉम्बे टाकीज में एक तरह से जमकर साहित्यिक सृजन में लग गया ।"[11] इसी बीच उन्होंने अपना महत्वपूर्ण एवं विशुध्द राजनैतिक उपन्यास 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' पूरा करके उसे सन 1946 में प्रकाशित किया । उसके बाद सन 1948 ई. में लखनऊ से प्रकाशित होनेवाले 'दैनिक नवजीवन' के प्रधान संपादक बने, किन्तु वहाँ भी वे राजनीति से त्रस्त हो गए । अतः उन्होंने प्रधान संपादक के पद को भी त्याग दिया । सन 1949 में उन्होंने 'आँखरी दाँव' नामक उपन्यास की रचना की । फिर भी उनका आर्थिक संघर्ष बराबर जारी ही था । अतः उन्होंने इसी समय उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन के प्रचार कार्य में भाग ले लिया ।

सन 1950 ई. में उन्हें आकाशवाणी में हिन्दी सलाहकार के रूप में नियुक्त किया गया । यहाँ उन्होंने सुगम संगीत तथा साहित्यिक कार्यक्रमों के निर्देशन का कार्य किया किन्तु उनका स्वतंत्र प्रवृत्ति का व्यक्तित्व उन्हें आजन्म नौकरी करने के लिए सहायक नहीं था । अतः उन्होंने वह काम भी छोड़ दिया । सन 1957 तक आते-आते उनके पिछले उपन्यासों का काफी प्रचार हो चुका था, उनपर उन्हें रायल्टी भी मिल रही थी, इसलिए उन्हें नौकरी करने की आवश्यकता भी न थी । सन 1957 में उनके 'थके पाँव', 'अपने खिलौने' ये उपन्यास छप रहे थे, तो 'भूले बिसरे चित्र' जैसा बृहत् उपन्यास लिखने का कार्य जारी था । इस प्रकार वे साहित्य सृजन करने में जुटते गए । उनकी आर्थिक स्थिति में भी अब सुधार हो रहा था । उपन्यासों पर मिलनेवाली रायल्टी पर उनका गुजारा चल सकता था । यह बात स्वीकारते हुए उन्होंने खुद लिखा है - "मैं इस सम्बन्ध में भाग्यशाली

था कि 'चित्रलेखा' मेरी भाग्यलक्ष्मी साबित हुई । और उसकी सफलता के बाद मेरे उपन्यासों की बिक्री बढ़ती गई ।... कि मैं आजीविका के लिए मात्र अपने उपन्यासों पर अवलंबित हो गया ।"[12]

सन 1960 के बाद तक आते-आते उनकी परिस्थिति में भी काफी सुधार आ गया । इस समय वर्माजी लखनऊ महानगर में 'चित्रलेखा' भवन का निर्माण कर स्थायी रूप में रहने लगे । वहाँ वे साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं का संगठन कर अपनी मित्र-मंडली के साथ हँसी-मजाक की जिंदगी बिताने लगे । उनके मित्र थे सुविख्यात साहित्यकार अमृतलाल नागर, श्रीलाल शुक्ल, ज्ञानचंद्र जैन, दिनदयाल गुप्त आदि । मात्र इसके साथ ही साथ अखंड साहित्य-सृजन करने में भी विमग्न थे इस तरह उन्हें उनके जीवन में स्थिरता प्राप्त हुई । आर्थिक और पारिवारिक समस्याओं के बावजूद और नौकरी करने में व्यस्त रहते हुए भी वे साहित्य की सेवा करते रहे । उनके नौकरी करने का क्षेत्र अधिकतर साहित्य के सम्बन्धित ही थे । फिल्म जगत के लिए संवाद एवं कहानी लेखन का कार्य किया, स्वयं पत्र-पत्रिकाएँ निकालकर उनका संपादन कार्य भी किया । उन्होंने क्या नहीं किया हैं ? कविताएँ, नाटक, निबंध और उपन्यास आदि एवं अन्य साहित्यिक विधाओं पर भी उन्होंने अपनी लेखनी चलायी है । सन 1957 से 1981 तक का कालखंड लेखन-कार्य के लिए बड़ी मेहनत के साथ खर्च किया । उम्र तो बढ़ चुकी थी, किन्तु फिर भी उन्होंने ताजगी के साथ साहित्य सृजन का कार्य जारी रखा था । 78 वर्ष की उम्र में भी उन्होंने 'सविनय और एक नाराज कविता' नामक खंडकाव्य भी लिखा जिसकी भूमिका में उन्होंने लिखा है -"1957 से 1980 तक के तेईस वर्षों का लंबा काल । इस बीच मैंने जो लिखा बड़ी मेहनत के साथ, उससे मुझे संतोष है ।... मेरी उम्र भी 78 वर्ष की हो गयी है, लेकिन जब-तक हाथ पैर सही सलामत है, दिमाग ठीक तौर से काम करता है, तब तक लिखते जाना हैं ।" [13]

इस तरह उन्होंने ढ़लती उम्र में भी अपने आपको साहित्य के लिए समर्पित किया । और कतिपय मौलिक कृतियों का योगदान देकर हिन्दी साहित्य को उपकृत किया । जिसे भूला नहीं जा सकता । ऐसे महान साहित्यकार का सन 1982 अक्तूबर में 78 बरस की उम्र में गले का कर्करोग होने से दिल्ली में देहान्त हुआ ।

भगवतीचरण वर्मा : व्यक्तित्व

भगवतीचरण वर्माजी के रंग, रूप आदि का वर्णन करते हुए डॉ. वैजनाथ प्रसाद शुक्ल ने 'भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना' नामक ग्रंथ में लिखा हैं - "मध्यम कद का स्वस्थ सुडौल, गढ़ा हुआ साँवला चुस्त बदन, मुख पर मधुर मुस्कान और मन में असीम आत्मविश्वास आँखों में एक प्रकार का विषाक्त सम्मोहन तथा दिल में धधकता अँगारा जिसपर इंद्रधनु खेल रहा हो ।" [14]

भगवती बाबू का नाम याद आते ही उनकी प्रसिध्द कविता याद आते बिना नहीं रहती है । वह है -

" हम दीवानों की क्या हस्ती,
हैं आज यहाँ, कल वहाँ चले,
मस्ती का आलम साथ चला,
हम धूल उड़ाते जहाँ चले ।" [15] (प्रेम संगीत - 1936)

इस कविता से उनके व्यक्तिगत जीवन का दर्शन होता है । हिन्दी के प्रसिध्द कवि हरिवंशराय बच्च्न का कथन बहुत ही द्रृष्टव्य है "कुछ ऐसा ही था, उनका व्यक्तिगत जीवन । मस्ती और फक्कड़पन के बगैर भगवतीबाबू की कल्पना ही असंभव है ।"[16]इससे स्पष्ट है कि उनका व्यक्तित्व प्रभावी था । वे सफेद कुर्ता पजामा पहनते थे । सर पर तिरछी टोपी पहनने की उनकी एक खास आदत थी । वे एक जिंदादिल इन्सान थे । और वे भावनाप्रधान तथा मानवता के मूर्तिमंत प्रतिक थे । हमेशा कार्य में मग्न रहना उनका खास स्वभाव था । उनके दिल में स्वाभिमान और उत्साह कूट-कूटकर भरा हुआ था । अमृतलाल नागर के शब्दों मे उनके स्वभाव की चर्चा और अधिक द्रृष्टिगोचर होगी ..."भगवती बाबू यदि कवि न हुए होते तो आज वे आई.सी.एस. अफसर भी हो सकते और राजनीतिक नेता-मंत्री भी । आरम्भ में यदि अनुकूल स्थितियाँ मिल जाती तो, शायद उद्योगपति भी ।" [17]

भगवतीबाबू का समस्त जीवन आर्थिक संघर्षो से ग्रस्त रहा था । किन्तु फिर भी उन्होंने उन संघर्षो का सामना हिम्मत के साथ किया । भगवतीचरण वर्माजी में जीवन

के प्रति एक जबरदस्त जिजीविषा थी । हरिवंशराय के अनुसार "उनके भीतर पूरे जीवन में मैंने एक जबरदस्त जिजीविषा महसूस की, हालांकि वे नियतिवादी कलाकार थे, लेकिन व्यक्तिगत जीवन में उनकी कर्मठता, जिजीविषा और युगुत्सा को देखकर आश्चर्य होता था ।" [18]

भगवती बाबू ने अपने जीवन में किसी सिध्दान्त के सामने कभी झूकना पसंद नहीं किया । समझौता करना भी उनके बस के बाहर की बात थी । बड़े से बड़े प्रलोभन को भी ठुकराने का अजीबसा साहस उनके व्यक्तित्व में भरा हुआ था ।

उनके व्यक्तित्व का स्वाभिमान यह एक विशेष पक्ष था, जिसके साथ वे चिपक कर रहे । मैं सबसे बड़ा हूँ यह बात वे गर्व के साथ कहते थे । मगर उनके स्वाभिमानी व्यक्तित्व में दूसरा भी पक्ष था कि वे किसी को अपने से छोटा या तुच्छ भी नहीं समझते थे । यह उनके दिल की उदारती थी । उन्होंने खुद कहा है - "हीनता और श्रेष्ठता दोनों ग्रंथियोंसे मुक्त ऐसे मर्यादित व्यक्तित्व कम ही मिलते हैं ।" [19]

स्पष्टवादिता यह भगवती बाबूजी के व्यक्तित्व का मौलिक गुण था । उन्होंने स्वयं लिखा हैं "यह तो सत्य नहीं है कि प्रशंसा मुझे बुरी लगती है, लेकिन प्रशंसा की भूख मुझमें नहीं और निंदा से मुझे चोट अवश्य लगती है, लेकिन निंदा का मुझमें भय नहीं ।"[20]

भगवती बाबू के व्यक्तित्व में हमेशा मानवीयता और स्नेहमयता का दर्शन होता है । वे अपने स्वाभिमान की तरह दूसरों के स्वाभिमान की भी रक्षा करते थे । और अपनी सीमासे बाहर जाकर सहायता भी । उन्हें संगीत का बड़ा शौक था, उन्होंने स्वयं लिखा है "बचपन में मुझे संगीत का शौक था, मेरा कंठ भी सुरीला था... । अगर मुझे संगीतज्ञ होने की परिस्थितियाँ मिली होती, तो शायद मैं संगीतकार हो गया होता ।"[21]

भगवती बाबू का नियतिपर विश्वास था । उनकी नियति एक सृजनशील कलाकार की थी । यह बात त्रिकालबाधित सत्य है कि, मानव प्रकृति के अनुरूप ही आचरण करता है, और जो कुछ करता है, वह परिस्थिति के कारण । इसपर बाबूजी का विश्वास था । लेकिन परिस्थिति के बहाव

में बहकर हद से आगे बहना और अपनी इच्छा आकांक्षाओ को दबाना उन्हें कदापि मंजुर नहीं था । उनका नियतिवाद भ्रामक अंधविश्वासों पर आधारित नहीं था । और न ही उसमें दुःख, अकर्म एवं निराशावाद के लिए कोई स्थान ।

उनके व्यक्तित्व का झुकाव राजनीति के क्षेत्र में भी रहा था, किन्तु पारिवारिक समस्या के कारण वे राजनीति को अपना योगदान नहीं दे पायें ।

भगवती बाबू की बुध्दि तीव्र थी । भावुकता तो उनमें जन्मतः मौजूद थी । यही कारण है वे प्रारम्भ में कविता करते थे । लेकिन परिस्थिति के ठोकरों ने उन्हें अधिक आर्थिक समाधान प्राप्त करनेवाली विद्याओं की ओर खींच लिया । भगवती बाबू का समग्र व्यक्तित्व ही ऐसा है, जो विभिन्न पहलुओं से भरा हुआ हैं । उनके समग्र जीवन का अध्ययन करने के उपरान्त यह बात मालूम होती है कि बाबूजीनें अपने समस्त जीवन में क्या नहीं किया है - वकील, पत्रकार एवं एक ज्येष्ठ कविरूप से भी उनका व्यक्तित्व मुखरित हो उठा है । इसके साथ ही साथ एक जेष्ठ उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार एवं निबंधकार के रुप में अवतरित होकर हिन्दी साहित्य के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया ।

इस प्रकार भगवती बाबू का व्यक्तित्व बहुआयामी था - स्वाभीमानी, अक्खड़-फक्कड़ और सिध्दान्तवादी, संगीत के शौकीन, प्रशंसा से लापरवाह तथा आलोचना से बेफिक्र, साहसी और भरापुरा बहु-आयामी एवं कर्तृत्व और सामर्थ्य का दीपस्तंभ की तरह जीवन्त व्यक्तित्व था उनका । जो हिन्दी साहित्यकारों के लिए अनमोल रत्न सिध्द हुआ ।

भगवतीचरण वर्मा : कृतित्व

साहित्यकाश के अनंत गगन मंडल में कितनें ही महान कलाकार उदित होते हैं और अस्त हो जाते हैं, किन्तु कई-बार ऐसा व्यक्तित्व देखने में आता है कि जिसके कृतित्व के प्रकाश से साहित्यिक जगत् आलोकित हो उठता है । बहुमुखी प्रतिभा के धनी, कवि और उपनयासकार भगवती बाबू का कृतित्व कुछ ऐसा ही है, जिसमें व्यक्तिवादी मानवचेतना के स्वर मुखरित हो उठे हैं । उनके साहित्यिक व्यक्तित्व में चिंतक और सर्जक ये दोनों भी रुप अलग-अलग नहीं हैं ।

वे दोनों भी एक दूसरे में धुलमिल गए हैं, किन्तु फिर भी उनकी समस्त रचनाओं में विविधता देखने को मिलती हैं ।

भगवतीचरण वर्माजी का साहित्यिक क्षेत्र विशाल है । उन्होंने क्या नहीं लिखा है । कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकीका, निंबंध,संस्मरण, खण्डकाव्य आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं पर लेखनी चलायी हैं । उनके समूचे साहित्य में अतीत, वर्तमान तथा भविष्यत् का सुनियोजित रूप से अंकन हुआ हैं । उनकी कई रचनाएँ विचारोत्तेजक हैं । ऐसे महान कलाकार के कृतित्व का परिचय आगे प्रस्तुत किया गया है ।

वस्तुतः भगवती बाबू का साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश एक कवि के रुप में हुआ था । काव्य प्रतिभा उनमें बचपन से ही थी और उनका नाम छायावादी प्रवर्तकों में भी लिया जाता था ।

लेखनकाल का आरंभ :

कहानीकार 'कौशिक' जी के सम्पर्क में आने से उनकी ही प्रेरणा से भगवतीचरण वर्माजी नें सन 1922-23 में "प्रभा" नामक पत्रिका के माध्यम से लेखन कार्य शुरू किया और निरंतर लिखते रहे ।

कविता :

काव्य के क्षेत्र में भगवतीचरण वर्मा ने सामाजिक, राजनीतिक तथा पौराणिक आदि विषयोंपर कविताएँ लिखी । उनके काव्यमें में मानवतावाद, प्रगतिवाद आदि की झलकियाँ देखने को मिलती हैं । उनकी 'क्रय-विक्रय', 'नूरजहाँ की कब्र पर' आदि कविताओं में छायावाद का स्वर दिखाई देता है, तो 'भैंसागाडी' कविता में मानवतावाद का सुन्दर समन्वय प्रकट हुआ है -

" बीवी - बच्चों से छीन, बीन
दाना-दाना, अपने में भर
× × × ×
× × × ×
कुछ फटा हुआ, कुछ कर्कश स्वर
चरमर-चरमर - चूँ चर्‌र-मर्‌र
जा रही चली भैंसागाड़ी ।"[22]

मधुकण :

यह भगवतीचरण वर्मा का पहला काव्यसंग्रह है, जिसका प्रकाशन सन 1932 ई. में हुआ । इसपर छायावाद का प्रभाव है । 'मेरी प्यास', 'आत्मसमर्पण', नूरजहाँ की कब्र पर', 'संसार' आदि इस संकलन की प्रसिध्द कविताएँ हैं । 'नूरजहाँ की कब्र पर' में छायावाद का सुन्दर समन्वय मुखरित हो उठा है -

"वासनाओं का यह संसार
भयानक भ्रम का है बंधन,
और इच्छाओं का मण्डल
आदि से अन्त रूदन है रूदन
एक अनियंत्रित हाहाकार
इसी को कहते है जीवन ।" 23

प्रेमसंगीत :

सन 1936 ई. में प्रकाशित व्दितीय काव्यसंग्रह है, जिसकी सभी कविताएँ शृंगार रसपर आश्रित हैं । 'हम दीवानों की क्या हस्ती' यह कविता बहुत ही सुंदर एवं मार्मिक बन गई है ।

एक दिन :

सन 1939 में प्रकाशित इस संकलन की रचनाएँ मुक्तछंद में हैं । अधिकांश कविताओंपर सामाजिक परिवेश का प्रभाव हैं ।

मानव :

इसका प्रकाशन सन 1940 ई. में हुआ । जिसमें भगवतीचरण वर्माजी नें मानव समाज के विविध पहलुओं को अंकित करने का प्रयास किया हैं, जिसमें उन्हें सफलता भी मिली है । 'एक रात', 'जीवन दर्शन', 'विषमता', 'भैंसगाडी', 'विस्मृति के फूल' आदि कविताएँ अपना विशेष महत्व रखती हैं । इसी संकूलन की 'पैंतिसवी वर्षगाँठ पर' इस कवितामें मानव जीवन का लेखा-जोखा चित्रित किया है -

"पैंतीस वर्ष का ज्ञान विशद्
जीवन का केवल एक गीत । "24

त्रिपथगा :

सन 1956 में प्रकाशित इस काव्यसंग्रह में 'महाकाल', 'द्रौपदी', 'कर्ण' आदि पौराणिक आख्यानों पर आधारित कविताओं पर प्रतिकात्मक रूपक का प्रभाव दिखाई देता हैं ।

रंगो से मोह :

इस संकलन की कविताओं में भगवती बाबू का नियतिवादी चिंतन दिखाई देता है । इस काव्य संग्रह का प्रकाशन सन 1968 ई. में हुआ । 'उल्टी-सीधी', 'देखो-सोचो-समझो', 'वर्माजीने लात मारी' आदि कविताएँ मनोरंजनात्मक बन पड़ी है, और प्रौढ़ भी ।

सविनय और नाराज कविता :

सन 1984 ई. में प्रकाशित 'सविनय और नाराज कविता' यह भगवतीचरण वर्माजी का खण्डकाव्य है ।

साहित्य के क्षेत्र में भगवतीचरण वर्माजी नें कविता से प्रवेश किया, उनके साहित्यिक जीवन में जितना उपन्यासों का महत्वपूर्ण स्थान है, उतनाही कविता के क्षेत्र में भी है ।

उपन्यास :

प्रेमचंद के बाद सामाजिक एवं यथार्थवादी उपन्यासकार के रूप में भगवतीचरण वर्माजी का नाम लिया जाता है । वे उपन्यास के कारण ही अन्य साहित्यिक विधासे इस क्षेत्र में अधिक प्रसिध्द हैं । उनके सभी उपन्यासों में कई समस्याओं को उठाया हैं । जिसके कारण समाज जागृती कराने में सहायता मिली है । उन्होंने हिन्दी साहित्य को 'पतन' (1929), 'चित्रलेखा' (1934), 'तीन वर्ष' (1936), 'टेढ़े पेढ़े रास्ते' (1946), 'आखिरी दाँव' (1949), 'अपने खिलौने' (1957), 'भूले बिसरे चित्र' (1959), 'वह फिर नहीं आई' (1960), 'सामर्थ्य और सीमा' (1962), 'थके पाँव' (1963), 'रेखा' (1964), 'सीधी सच्ची बातें' (1969), 'सबहिं नचावत रामगोसाई' (1970), 'प्रश्न और मरीचिका' (1973), 'युवराज चुंडा' (1979), 'धुप्पल' (1981), 'चाणक्य' (1982) आदि उपन्यास देकर अपना बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान दिया हैं ।

भगवतीचरण वर्माजी का प्रथम उपन्यास 'पतन' ऐतिहासिक है । 'चित्रलेखा' उनका पहला सफल उपन्यास हैं । जिसमें पाप पुण्य की शाश्वत समस्या को उठाया है । सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक पृष्टभूमि के आधारपर लिखा हुआ यह समस्याप्रधान उपन्यास हिन्दी साहित्य में अपना विशेष स्थान रखता है । इस उपन्यास की भाषा काव्यमय तथा शैली तर्कप्रधान है । इसमें चित्रित प्रत्येक पात्र बुद्धिजीवी है । 'सामर्थ्य और सीमा' तथा 'सबहि नचावत रामगोसाई' ये दोनों उपन्यास स्वतंत्र भारत की पृष्टभूमि पर लिखे हैं ।

भगवती बाबू के उपन्यासों में एक शतक (वर्षो) के सामाजिक जीवन के परिवर्तनशील मानवीय मूल्यों की झलकियाँ देखने कोमिलती हैं । उनके सभी उपन्यासों में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं के साथ ही साथ नारी-समस्या, दहेज-प्रथा, संयुक्त परिवार की समस्या, अनमेल विवाह, यौन समस्या, अतृप्त कामवासना, वेश्या समस्या आदि समस्याओं को उठाया हैं ।

'तीन वर्ष' उनका तर्कप्रधान सामाजिक उपन्यास है और इस उपन्यास का कथानक यथार्थ भूमिपर निर्मित है । 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' उनका विशुद्ध राजनीतिक उपन्यास है, जिसमें व्यापक समस्याओं का अंकन हुआ है । यह भगवतीचरण वर्माजी की प्रौढ रचना है ।

'सामर्थ्य और सीमा' उनका समस्यामूलक उपन्यास है, जिसकी समस्या है मनुष्य के सामर्थ्य और सीमा की ।

'अपने खिलौने' भगवती बाबू का व्यंग्यप्रधान सीमित कथावस्तु का उपन्यास है । कथावस्तु सीमित होते हुए भी इसमें पात्रों के संघर्ष को उभारने को लेखकने सफलता पाई है । पात्र संख्या ज्यादह होने के कारण इसमे नाटकीयता भी आ गयी हैं ।

'थके पाँव' इस सामाजिक उपन्यास में भगवती बाबू ने निम्न-मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक दशा का चित्रण किया हैं ।

'आखिरी दाँव' उपन्यास में भाग्य और नियति को महत्वपूर्ण माना हैं । भाग्य के कारण ही इस उपन्यास की नायिका चमेली तथा नायक रामेश्वर का पतन हुआ हैं । 'रेखा' उनका मनोवैज्ञानिक उपन्यास है । जिसमें यौन समस्या पर प्रकाश ड़ाला है ।

'भूले बिसरे चित्र' में भगवती बाबूनें चार पीढ़ियों के माध्यम से मानव मूल्यों के संक्रमण की रूपरेखा प्रस्तुत की है । इसमें महाकाव्य की विशालता है । इसमें समूचे युग की सांस्कृतिक तथा सामाजिक झलकियाँ देखने को मिलती है । इसी उपन्यास ने उन्हें 'ज्ञानपीठ' उपाधिसे विभूषित किया ।

'वह फिर नहीं आई' यह लघु उपन्यास ज्ञानचंद नामक पात्र के माध्यम से आत्मकथात्मक शैली में लिखा हैं । इसमें विस्थापितों की समस्याओं को हल किया है । तो 'सीधी सच्ची बाते' में व्यापक धरातल पर राजनीतिक समस्याओंको उठाया हैं ।

'प्रश्न और मरीचिका' मे स्वातंत्र्योत्तर भारत का युगचित्र समेटा है, जिसमें राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में बढ़ते हुए अविश्वास का कटुसत्य चित्रित किया है ।

'युवराज चुंड़ा' तथा 'चाणक्य' उनके ऐतिहासिक उपन्यास हैं । सन 1981 ई. में प्रकाशित 'धुप्पल' आत्मचरितात्मक उपन्यास है ।

इस प्रकार भगवतीचरण वर्माजीने उपन्यास के क्षेत्रमें क्रांति करके हिन्दी उपन्यास साहित्य को उपकृत किया है ।

कहानी :

भगवतीचरण वर्माजीने कहानी के क्षेत्रमें भी अपना विशेष योगदान दिया है । यदि उन्होंने कहानियाँ भले ही अधिक मात्रा में नहीं लिखी हो, फिर भी उनके प्रत्येक कहानी में विविधता के गुण देखने पाने को मिलते हैं । कहानी के माध्यमसे भगवती बाबूने समाज में फैली हुई विषमताओं को अंकित किया हैं । 'बेकारी का अभिशाप', 'कुँवर साहब का कुत्ता', राख और चिनगारी', 'रूपया तुम्हें खा गया' आदि कहानियों में व्यक्ति की विवशताका मार्मिक ढंगसे चित्रण किया है ।

उनकी कहानियों में मानव जीवन के नैतिक मानदंडों की स्थापना हुई है । 'दो रास्ते', 'दो पहलू' आदि में मानव जीवनके नैतिक मानदंडो की सुन्दर झलकियाँ प्रस्तुत की हैं ।

भगवतीबाबू ने अपनी कहानियों मे स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर भारत की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सत्ता को समेट लिया हैं ।

'इन्स्टालमेंट' (1933), 'दो बांके' (1935), 'राख और चिनगारी' (1950), तथा 'मोर्चाबंदी' (1976) आदि उनके प्रसिद्ध कहानीसंग्रह हैं ।

निबंध :

इस क्षेत्र में भी भगवतीचरण वर्मा ने लेखनी चलाकर साहित्यिक तथा सामाजिक निबंध लिखे हैं । साहित्यिक निबंधो में उन्होंने अपने मत प्रकट किये हैं, तो सामाजिक निबंधो में समाज की समस्याओं पर चिंतन करके अपने विचार प्रकट किए हैं ।

साहित्य की मान्यताएँ :

इस निबंध संग्रह में भगवती बाबूनें साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अपने विचार प्रकट कर दिए हैं । इस संग्रह के 'साहित्य का स्त्रोत', 'साहित्य में शब्द का स्थान', 'भावना' आदि निबंध चिंतनप्रधान हैं ।

भगवतीचरण वर्माजी के कई निबंध विश्लेषणात्मक भी हैं, जिनमें उपन्यास, कहानी, कविता, रेखाचित्र, निबंध तथा नाटक आदि साहित्यिक विधाओं पर विश्लेषणात्मक शैली में अपने विचार प्रकट किए हैं ।

हमारी उलझन :

इस संकलन के निबंधो में वर्माजीने सामाजिक समस्याओं तथा प्रचलित परम्पराओं पर अपने मौलिक विचार प्रकट किए हैं । 'दिवाली', 'होली' आदि उल्लेखनीय सामाजिक निबंध हैं ।

नाटक :

नाटक के क्षेत्र में भगवतीचरण वर्माजी का योगदान कम है । उन्होंने केवल दो नाटक और कुछ एकांकी नाटक लिखे हैं ।

बूझता दीपक :

इस रचना के अंतर्गत 'बूझता दीपक' यह पूर्ण नाटक है, जो राजनीतिक तथा सामाजिक तथा जीवन पर आधारित है । तो इसमें ही 'दो कलाकार', 'सबसे बड़ा आदमी' और 'चौपाल' ये एकांकी भी संकलित है ।

'दो कलाकार' एकांकी में एक चित्रकार की हालत दिखलाई है, तो 'सबसे बड़ा आदमी' में जेबे साफ करनेवाले व्यक्ति को सबसे बड़ा ठहराया है । 'चौपाल' एकांकी में ग्रामीण समाज के लोगों की मनोवृत्ति का चित्रण दिखलाया है ।

रुपया तुम्हें खा गया

यह भगवतीचरण वर्माजी का रूपकात्मक नाटक है और इसमें आधुनिक समाज की आर्थिक लिप्सा वृत्ति पर कठोरता से प्रहार किया है ।

इन रचनाओं के अलावा 'अतीत के गर्त से (संस्मरण 1979), 'वासवदत्ता' (चित्रलेखा), 'साहित्य के सिद्धांत तथा रूप (साहित्यालोचन), तथा 'मेरी कहानियाँ', 'मेरे नाटक', 'मेरी कविताएँ' और कुछ बाल-साहित्य आदि उनकी रचनाएँ हैं ।

संदर्भ सूची

1. सविनय और एक नाराज कविता : भूमिका पृ. 3
   (संस्मरण) भगवतीचरण वर्मा, रामकमल, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1984
2. अतीत के गर्त से (संस्मरण) पृ. 63-64
   भगवतीचरण वर्मा, राजकमल नई दिल्ली, प्रथम सं. 1979
3. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना पृ. 28
   डॉ. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल - प्रेम प्रकाशन मंदिर दिल्ली प्रथम संस्करण 1977
4. अतीत के गर्त से पृ. 12
5. वही, पृ. 14
6. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 30
   वर्माजी से व्यक्तिगत वार्तालाप - डॉ. बैजनाथप्रसाद शुक्ल
7. अतीत के गर्त से, पृ. 109
8. मेरी रचना प्रक्रिया एक निबंध : पृ. 16
   भगवतीचरण वर्मा, अध्येय विशेषांक, जुलाई-अगस्त 1972
9. सविनय और एक नाराज कविता : भूमिका, पृ. 13
   भगवतीचरण वर्मा
10. वही, पृ. 13, 14
11. वही, पृ. 16
12. अतीत के गर्त से, पृ. 42
    संस्मरण - भगवतीचरण वर्मा
13. सविनय और एक नाराज कविता, पृ. 21
    भगवतीचरण वर्मा
14. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 27
    डॉ. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल
15. 'प्रेम संगीत' - 'अर्पित मेरी भावना' (भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं का प्रतिनिधी संकलन) पृ. 32
    संपादक - धर्मवीर भारती, श्रीलाल शुक्ल, सुरेंद्र तिवारी,
    राजकमल प्रकाशन दिल्ली - पटना, प्रथम संस्करण 1974

16. धर्मयुग, 18 से 24 अक्तूबर 1981, पृ. 35
17. साप्ताहिक हिन्दुस्थान, 15 सितंबर 1963, पृ. 45
18. धर्मयुग, 18 से 24 अक्तूबर 1981, पृ. 35
19. वही, पृ. 35
20. सारिका, जनवरी 1963, पृ. 9
21. सविनय और एक नाराज कविता : भूमिका पृ. 9
भगवतीचरण वर्मा
22. भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं का प्रतिनिधि संकलन
'अर्पित मेरी भावना' पृ. 68
23. वही, पृ. 151
24. वही, पृ. 79